ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

ग्रामीण विकास: विभिन्न विचारधाराएँ

कु. अर्चना तिवारी [*1]
[*1] शोधार्थी, अर्थशास्त्र विभाग, रानीदुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

मुख्य शब्द – ग्रामीण विकास

Cite This Article: कु. अर्चना तिवारी. (2017). "ग्रामीण विकास: विभिन्न विचारधाराएँ." *International Journal of Research - Granthaalayah*, 5(7), 390-398. https://doi.org/10.5281/zenodo.838192.

1. भूमिका

भारत के संदर्भ में सनातन–पुरातन अवधारणा रही है कि भारत गाँवों का देश है जिसकी आर्थिक–सामाजिक प्राप्ति का आधार कृषि है, जैसा कि निम्नांकित श्लोक से स्पष्ट होता है।

''यथा शूद्र जनप्राय, समृद्ध कृषिकला
क्षेत्रोप योग भूमर्ध्य, वसति ग्राम संज्ञिका।''[1]

पौराणिक संस्कृत साहित्य के मार्कण्डेय पुराण में, ग्राम के संदर्भ में उक्त उल्लेख आया है। गाँव की विशेषता में कहा गया – जहाँ कृषि कार्य किया जाता है एवं जहाँ कृषि क्षेत्र समूह है वह गाँव है।

गाँव का उदय, इतिहास के कृषि अर्थव्यवस्था के उदय के साथ जुड़ा है। हल (Cultivator) के अविष्कार के कारण ही मनुष्य स्थायी रूप से कृषि का विकास कर पाया जोकि खाद्यान्न की व्यवस्था का मूल स्रोत है।

ग्रामीण विकास आम तौर पर अपेक्षाकृत पृथक व कम आबादी वाले क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की आर्थिक खुशहाली से संबद्ध जीवन स्तर में सुधार की प्रक्रिया को दर्शाता है।[2]

विद्वानों ने ग्रामीण विकास की परिभाषायें निम्न प्रकार दी हैं –

ग्रामीण विकास को शाब्दिक रूप में परिभाषित करने का अर्थ है – ग्रामीण का चहुँमुखी विकास। वह विकास जिससे वहां की जनता का शारीरिक एवं मानसिक विकास हो सके।

विश्व बैंक[3] के अनुसार –

''वह व्यूह रचना जिससे ग्रामीण जनता का सामाजिक एवं आर्थिक विकास हो, ग्रामीण विकास कहलाता है।''

परिभाषा में **विश्व बैंक** ने उन सभी निर्धन जनता को सम्मिलित किया है जो गाँवों में निवास करती है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

राबर्ट चेम्बर्स[4] के अनुसार –

''ग्रामीण विकास एक पद्धति है; जिसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के निर्धन और गरीब लोगों की सहायता की जाती है, जिससे अधिक लाभों की पूर्ति और नियंत्रण से ग्रामीण विकास हो सके। लघु कृषक, सीमांत कृषक, खेतीहर मजदूर और श्रमिक वर्ग के लोग इसमें शामिल किये जाते हैं।''

सीयर्स के अनुसार –

''ग्रामीण विकास आर्थिक क्षेत्र के सभी पहलुओं में अधिक उत्पादन प्राप्त करता है। इस उत्पादन को जनसंख्या के अधिक लोगों में इस प्रकार वितरण सुनिश्चित करना जिससे वे जीवन की गुणवत्ता उत्पन्न कर सकें। यह मानव व्यक्तित्व की क्षमता की अनुभूति है।''[5]

रोजर्स[6] के अनुसार –

''ग्रामीण विकास एक प्रकार का सामाजिक परिवर्तन है जिसमें ग्रामीण सामाजिक प्रणाली में नए विचार प्रस्तावित कर आधुनिक उत्पादन विधि और उन्नत सामाजिक संगठन के प्रति व्यक्ति अधिक आय और उच्च जीवन स्तर उत्पन्न हो।''

ग्रामीण विकास की विभिन्न विचारधाराएँ :

ग्रामीण विकास की गाँधीवादी विचारधारा :

गाँधी जी की विचारधारा ग्रामीण विकास के संबंध में आज भी प्रासंगिक है। गाँधी जी की ग्रामीण विकास विचारधारा की प्रमुख बातें निम्न प्रकार हैं –

(1) श्रम की महत्ता

भारत की प्रमुख समस्याओं बेकारी और अर्द्धबेकारी के संदर्भ में उन्होंने गाँव में श्रम साधन रोजगार अवसरों की आवश्यकताओं को विलक्षित किया। गाँधी जी श्रम को सम्मान की दृष्टि से देखते थे, अतः उनका मत था कि प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक श्रम करना चाहिये। व्यक्ति को अपनी आवश्यकताओं की थोड़ी बहुत वस्तुओं का उत्पादन स्वयं करना चाहिये। बिना श्रम के जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति को उन्होंने समाज में रहने के लिये अयोग्य करार दिया। उन्होंने स्वयं इस आदर्श को जीवन में उतारा था। वे प्रतिदिन चरखा व चक्की चलाते थे, उनका मानना था कि भी काम बुरा नहीं है। कार्य को ढंग से न करना अपने आप में बुराई साबित होता है।[7]

(2) ग्रामवाद

गाँधी जी का संपूर्ण अर्थशास्त्र ही ग्राम प्रधान अर्थशास्त्र है। उन्होंने भारत के गाँवों की दशा को ध्यान में रखकर लघु एवं कुटीर उद्योगों को महत्व दिया था। गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित आर्थिक स्वावलंबन सादा जीवन उच्च विचार, भू–स्वामित्व, पंचायती राज, सर्वोदय संबंधी विचारों के मूल में गाँवों की समस्या व उनका निदान दिखाई देता है, उनका दृढ़ मत था कि जब तक गाँवों की दशा ठीक नहीं होगी, तब तक राष्ट्र शक्तिशाली नहीं हो सकता। बापू गाँव की दशा सुधार कर व्यक्ति की दशा सुधारना चाहते थे। वस्तुतः उनका यह प्रयास सराहनीय एवं समयानुकूल था। आज अर्द्ध विकसित एवं विकसित देशों में मुद्रास्फीति, बेरोजगारी, गैर–नवीनीकरण, योग्य संसाधनों भी समाप्ति, अमीर व गरीब के बीच बढ़ता अंतराल आदि समस्याओं का समाधान भी गाँधी जी के इस ग्राम अर्थशास्त्र में खोजा जा सकता है। भारत के आर्थिक जीवन में गाँवों के महत्व के संदर्भ में उन्होंने कहा था, ''जनसंख्या का 80 प्रतिशत हिस्सा जो हमारे खेतों में

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

काम कर रहा है तथा जिसे व्यवहारतः साल में कम से कम चार महीने के लिये कोई काम नहीं है और इस साल जो भुखमरी की सीमा रेखा पर जी रहा है, उसे कृषि के पूरक के रूप में कम से कम चार महीने सरल उद्योग की जरूरत होगी ....., बहु संख्यक लोगों की रूग्णता का कारण पैसे की कमी उतनी नहीं है जितनी काम की कमी है ....., लाखों लोगों को जो कोई सम्मान झोपड़ी में काम प्रदान करता है व उन्हें भोजन एवं वस्त्र प्रदान करता है अथवा दोनों एक ही हैं। गाँधी जी ने आगे कहा, मेरी योजना के अंतर्गत शहरों द्वारा उन चीजों का उत्पादन नहीं करने दिया जायेगा जिन्हें गाँव उतने ही अच्छे ढंग से उत्पादित कर सकते हैं। शहरों का उचित कार्य यह होता है कि वे गाँव की वस्तुओं को उठाने के लिये कार्य करें। इसे उन्होंने ग्रामवाद की संज्ञा दी।''[8]

(3) समग्र सेवा

गाँधी जी का विचार था कि केवल उत्पादन में अभिवृद्धि और उसके उचित वितरण मात्र से ही समस्या नहीं सुलझ सकती; गाँवों के सर्वांगीण विकास पर जोर दिया जाना चाहिये, उनका मानना था कि गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम का प्रभाव तभी स्थायी हो सकेगा जब समग्र सेवा को ग्रामोद्योग या ग्राम पुर्ननिर्माण के व्यापक कार्यक्रम के एक अंग के रूप में चलाया जाता है। यह तभी संभव है जब किसी विशेष क्षेत्र और वहां के रहने वाले लोगों का विकेन्द्रित आर्थिक विकास हो। उन्होंने इस कार्यक्रम को ''समग्र सेवा'' नाम से पुकारा जिसका अभिप्राय है – संपूर्ण ग्रामीण अर्थव्यवस्था का नये आधार पर पुनर्गठन। इस प्रकार की योजना के अंतर्गत कृषि, पशुपालन, खादी और ग्रामोद्योग तथा अन्य संबंधित गतिविधियाँ होंगी। इन सबकी पृष्ठभूमि में पाँच मुख्य बातों के माध्यम से ग्रामीण जीवन की पुनःसंरचना करना था, वे अग्रलिखित हैं :

1. ग्रामीण अर्थव्यवस्था संभव सीमा तक आत्मनिर्भर हो।
2. उत्पादन व उपभोग का विकेन्द्रीकरण हो।
3. सन्निकट व्यक्तिगत सम्बंध हों।
4. प्रशिक्षण, शोध तथा विकास, तकनीकी सहायक तथा प्रोत्साहन सहायता छोड़कर सरकार पर कम से कम निर्भर रहना एवं कार्य की व्यवस्था के लिये सहकारिताओं का गठन।

(4) विकेन्द्रीकरण और खादी ग्रामोद्योग

गाँधी जी का आर्थिक कार्य ऐसे विकेन्द्रीकरण पर आधारित है जो हमें अत्यधिक मशीनीकरण की बुराई से बचा सकता है। उसमें निहितार्थ यह है कि गरीबी जैसी बुराई से कम से कम अवधि में विकास योजनाएँ आरम्भ कर लड़ना चाहिये। इसमें यथासम्भव अनुकूल योजनाएँ चलाई जानी चाहिये; लेकिन इन सब कार्यक्रमों का मुख्य केन्द्र गाँवों को ही बनाना चाहिये। इससे प्रभावशाली और आत्मनिर्भर विकेन्द्रित, गत्यात्मक कृषि औद्योगिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था की प्राप्ति होगी। गाँधी जी ने यह महसूस किया कि यदि रोजगार सृजन न करके औद्योगिकरण ही किया जाता रहा तो श्रम का विस्थापन होगा और करोड़ों लोगों की रोजी–रोटी छिन जायेगी। इसलिये उन्होंने खादी और ग्रामोद्योग को चलाने का तर्क दिया क्योंकि ये उद्योग श्रम प्रधान हैं और आर्थिक विकेन्द्रीकरण के सृजन में सहायता करते हैं। गाँधी जी कहा करते थे कि सफलता की कुंजी विशाल उत्पादन नहीं बल्कि अधिकांश लोगों द्वारा किये जाने वाले उत्पादन में है। इससे मानव संसाधनों को पूर्ण रोजगार प्राप्त होगा।

(5) उत्पादक रोजगार

गाँधी जी के अनुसार ग्रामीणों को आधुनिक मशीनों और औजारों का उपयोग करने में कोई प्रतिवाद नहीं होगा जिसे वे बना सके और प्रयोग में ला सकते हैं लेकिन इनका उपयोग दूसरे के शोषण के लिये नहीं होना चाहिये। गाँधी जी ने कहा था, ''विद्युत जहाज निर्माण, लौह कार्य, मशीन निर्माण और ऐसे ही अन्य कार्यों को ग्रामीण दस्तकारियों के साथ–साथ बने रहने की मैं परिकल्पना करता हूँ ..... अब तक औद्योगिकरण का आयोजन इस प्रकार हुआ है जहाँ गाँवों और ग्रामीण दस्तकारियों का विनाश करना हो।'' गाँधी जी विकास की अपेक्षा परिवर्तनजन्य प्रगति में विश्वास करते थे। उन्हें यह बात स्पष्ट थी कि भारतीय अर्थव्यवस्था की समस्याओं की तुलना अन्य देशों के साथ नहीं की जा सकती क्योंकि ''विश्व में दूसरा कोई

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

ऐसा देश नहीं है जहाँ कई लाख लोग केवल आंशिक रोजगार प्राप्त हों और जहाँ की सभ्यता प्रमुखता से ग्रामीण हो तथा प्रति व्यक्ति जोत मुश्किल से दो एकड़ हो।'' हाल ही में 'उत्पादक रोजगार' (किसी मजदूरी पर रोजगार) पर बल दिया जाने लगा है। गाँधी जी के लिये ''वह व्यक्ति जो प्रतिदिन अपनी आय में दो पैसा और बढ़ा लेता है और वह भी बिना किसी भारी पूँजी विनियोग के, तो उसकी आय में यह योग एक शानदार बात है और इसके अलावा वह व्यक्ति उन लाखों लोगों के हृदयों में मरती अशा में प्राण फूँकता है।'' इस प्रकार प्रकृति के स्वास्थ्य पर कुपरिवेश में गाँधी जी ग्रामीण समुदाय की अर्द्धबेरोजगारी का समाधान करते हैं।[9]

(6) उपभोक्ता माल क्षेत्र

यह सत्य है कि गाँधी जी आधुनिक औद्योगिकरण के बहुत से पहलुओं के विरुद्ध थे लेकिन यह सोचना गलत है कि वे सभी प्रकार की मशीनों के विरुद्ध थे। उन्होंने जो आपत्ति की थी वह बिना सोचे–समझे मशीनों की संख्या बढ़ाते जाने पर थी। गाँधी जी का मानना था कि रेल्वे, बिजलीघर, पुलों, बड़े जहाजों और भवनों के निर्माण के लिये पूँजी सघन उद्योगों का होना अति आवश्यक है। उन पर राज्य का स्वामित्व होना चाहिये न कि किसी व्यक्ति विशेष का। उपभोक्ता माल क्षेत्र के औद्योगिकरण के मामले का उन्होंने काफी विरोध किया। बापू ने कहा था कि जब मानवीय श्रम की कमी हो तब मशीनों का अंधाधुंध प्रयोग करना एक गलत कार्य है। गाँधी जी का मुख्य बल ऐसी तकनीकी अपनाने पर था जो उपयुक्त, विकेन्द्रित और कृषि लघु उद्योगों तथा हस्तकलाओं में सुधार करने में लाभदायक हो। उन्होंने यह चाहा था कि औद्योगिक समाज लोगों के न्यासी की तरह कार्य करे। गाँधी जी के अनुसार उपभोक्ता माल प्रत्यय पर उचित ध्यान देकर ग्रामीण विकास की काया पलटने का समय आ गया है।[10]

ग्रामीण विकास का नेहरू मॉडल[11] :

नेहरू जी की ग्रामीण विकास एवं गरीबी उन्मूलन में विशेष रुचि थी। गाँवों में रहने वाले निम्न आय वर्ग के लोगों के जीवन स्तर को आत्मस्फूर्त बनाना, उनका दूरगामी दृष्टिकोण था। ऐसा मूलतः उनके मानवीय संवेगों तथा विकासोन्मुख दृष्टिकोण के कारण सम्भव हुआ। उत्पादन में वृद्धि तथा समाज के कमजोर वर्ग की आर्थिक दशा में सुधार करने के उद्देश्य से नेहरू जी भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रमों के रचयिता थे। गरीबी उन्मूलन एवं त्वरित ग्रामीण विकास के जितने भी कार्यक्रम हैं, वे न्यूनाधिक मात्रा में, 1952 में उनके द्वारा आरम्भ किये गये उस सामुदायिक विकास कार्यक्रम के स्निग्ध एवं परिमार्जित स्वरूप हैं, जिसके अंतर्गत् गाँवों में विकास व विकास सेवाओं का जाल बिछाया गया है। फलस्वरूप ग्रामीण जनता में जागृति उत्पन्न की गई तथा साठ के दशक के मध्य, कृषिगत क्षेत्र में तकनीकी परिवर्तन लागू किये गये।

(1) आर्थिक नियोजन

नेहरू जी भारतीय आर्थिक नियोजन के संस्थापक थे। 1938 के अंत में उन्होंने राष्ट्रीय नियोजन समिति की स्थापना की और इसी समिति द्वारा सर्वप्रथम स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर भारत की विकासील अर्थव्यवस्था को स्वस्फूर्त अर्थव्यवस्था में स्थानांतरित करने हेतु एक कारगर विकास व्यूह रचना का सुझाव दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1950 में नेहरू जी की अध्यक्षता में योजना आयोग की स्थापना हुई, जिसका कार्य देश के भौतिक पूँजीगत व मानवीय साधनों में जांच करना और इसके सर्वाधिक प्रभावपूर्ण व संतुलित उपयोग के लिये योजनाएँ तैयार करना रखा गया। नेहरू जी ने स्वतंत्रता के बाद के प्रथम 14 वर्षों में भारतीय नियोजन के मार्गदर्शक और प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माता बने।

नेहरू जी के युगीन नियोजन का सार यह था कि भारी उद्योगों का विकास घरेलू क्षेत्र में उपयोग की वस्तुओं के विकास से संबद्ध है। इसी धारणा के फलस्वरूप लघु उद्योगों तथा कृषि के महत्व दिया गया, जो उपभोक्त वस्तुओं के प्रमुख स्त्रोत थे। 1977 के उत्तरार्द्ध तक भारतीय अर्थव्यवस्था नेहरू जी उस

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

नियोजन व्यूहरचना पर आधारित रही, जिसे लोकप्रिय रूप से ''विकास का नेहरू मॉडल'' कहा जाता है। इस मॉडल ने ग्रामीण भारत की तस्वीर बदल दी।

नेहरू जी का मत था कि ग्रामीण भारत में बेरोजगारी का संबंध मूलतः अर्थव्यवस्था की संरचना या ढांचे से है। वे कृषि क्षेत्र में छिपी हुई बेरोजगारी तथा अल्प बेरोजगार से विज्ञ थे। इसलिये उन्होंने कहा कि ''बड़े पैमाने पर बेरोजगारी से अनेक नवयुवकों का जीवन नष्ट हो जाता है और यह हमारी एक प्रमुख समस्या है। हम इसे किसी जादू से दूर नहीं कर सकेंगे ....., परंतु हम प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को रोजगार एवं काम की गारंटी दे सकें जो मेहनत करने के लिये तैयार है और हाथ से काम करने को बुरा नहीं समझता।'' नेहरू जी की उपर्युक्त सांकेतिक तथा दूरदर्शी व्यूहरचना के अनुरूप आज हमारे देश में ग्रामीण विकास की मुख्यधारा में ग्रामीण भारत के गरीबों को बड़े पैमाने पर रोजगार उपलब्ध कराने हेतु ''जवाहर रोजगार योजना'' आरम्भ की गई।

(2) सामुदायिक विकास कार्यक्रम

नेहरू जी, सामुदायिक विकास परियोजनाओं को भारत की जगमगाती, जीवन से परिपूर्ण एवं प्रावैगिक चिंगारियाँ कहा करते थे, जिसमें शक्ति, आशा व उत्साह की किरण फूटती है। इस सारगर्भित लक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए उन्होंने गाँव के सर्वांगीण विकास के लिये 2 अक्टूबर 1952 से 1955 तक चुनी हुई परियोजनाओं में सामुदायिक विकास कार्यक्रम लागू किया था, जिसका मुख्य उद्देश्य ''जाति उन्मुख परम्परागत समाज की समाज उन्मुख समाज'' में परिवर्तित करना था ताकि जाति की जगह समाज को ऊँचा स्थान मिले। आरम्भ में ''राष्ट्रीय विस्तार सेवा'' सामुदायिक विकास कार्यक्रम की प्रारम्भिक अवस्था थी। एक से दो वर्ष की अवधि के बाद राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों में से कुछ को सामुदायिक विकास के अंतर्गत ले लिया गया। अप्रैल 1958 से सामुदायिक विकास एवं राष्ट्रीय विस्तार सेवा का अंतर समाप्त हो गया। नेहरू जी के प्रयासों से सामुदायिक विकास एवं राष्ट्रीय विस्तार सेवा का अंतर समाप्त हो गया। नेहरू जी के प्रयासों से सामुदायिक विकास कार्यक्रम में एक वर्ष की विस्तारपूर्ण सेवा भी रखी गई थी, जिसमें कृषि की पैदावार बढ़ाने पर जोर दिया गया था। प्रारम्भ में 55 परियोजनाओं में 300 गाँव व लगभग दो लाख व्यक्ति शामिल किये गये।

नेहरू जी इस कार्यक्रम के माध्यम से स्वावलम्बी लोकतंत्र को गहराई से रोपित करना चाहते थे, अतः उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिये गाँवों में अनेक प्रकार के कार्य करने पर जोर दिया गया, जैसे सिंचाई का विकास, कृषिगत साधनों का विस्तार, शिक्षा, प्रसार, स्वास्थ्य सुविधाओं में वृद्धि, सस्ते आवासीय मकानों का निर्माण, वृक्षारोपण, भूमि सुधार, सड़क निर्माण, समाज कल्याण आदि। इन कार्यक्रमों में उत्पादन एवं सामाजिक कल्याण के जुड़वा उद्देश्यों पर बल दिया गया।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत् 5011 विकासखण्ड स्थापित किये गये जिनमें प्रत्येक लगभग 100 गाँव व एक लाख की जनसंख्या शामिल की गई। देश में 2,16,051 ग्राम पंचायतें, 4521 पंचायत समितियाँ व 291 जिला परिषदें स्थापित की गईं। कार्यक्रम का उद्देश्य राज्य सरकारों पर डाला गया। जिलों में कार्यक्रम जारी रखने के लिये जिला परिषदों की स्थापना की गई। खण्ड स्तर पर पंचायत समितियों का निर्माण किया गया। इनमें जन–प्रतिनिधियों को शामिल करने का उद्देश्य यह था कि सरकारी कर्मचारी तथा जनप्रतिनिधि मिल–जुलकर विकास कार्यों को आगे बढ़ा सकें। ग्राम स्तर पर एक ग्राम सेवक नियुक्त किया गया जिसको बहुउद्देश्यीय कार्यकर्ता के रूप में परियोजित किया गया।[12]

बलवन्तराय मेहता समिति (1958)[13] ने कार्यक्रम की सफलता हेतु लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण, जनता द्वारा योजना बनाने, सामुदायिक विकास मन्त्रालय द्वारा ग्राम विकास संघों में समन्वयक स्थापित करने, कार्यक्रम की विभिन्न अवस्थाएँ समाप्त करने कृषि एवं ग्रामीण विकास उद्योगों को विकसित करने एवं कर्मचारियों का उचित ढंग से उपयोग करने का सुझाव दिया। इन सुझावों के आधार पर द्वितीय योजना में सामुदायिक

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

विकास की दो अवस्थाएँ कर दी गईं (प्रथम 12 लाख रुपये का व्यय व द्वितीय 5 लाख रुपये का) पंचायतीराज की स्थापना की गई तथा खण्ड इकाई की योजनाओं जोर दिया गया।

(3) पंचायतीराज

नेहरू जी पंचायती राज के हिमायती थे और उन्होंने 2 अक्टूबर 1939 को राजस्थान में नागौर जिले में दीपक प्रज्जवलित करके लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की आधारशिला रखी।[14] उनका मत था कि पंचायतों एवं ग्राम समुदायों को अपने प्रस्ताव स्वयं तैयार करने चाहिये। हम अब केवल शीर्ष स्तर के ही कार्य नहीं कर सकते, क्योंकि हमको अपने लाखों लोगों को मिलकर संगठित करना है और इन कार्यों में उन लोगों को हिस्सेदार एवं सहभागी बनाना है। नेहरू जी ने 2 अक्टूबर 1958 को स्थानीय स्वायत्तता संबंधी केन्द्रीय परिषद में कहा था : ''पंचायतें हमारे शासनतंत्र की बुनियाद हैं। यदि वह बुनियाद ठोस व पुख्ता नहीं होती तो ऊपरी ढांचा कमजोर रहेगा।'' नेहरू जी और स्व. एस.के. डे के मस्तिष्क की अनिवर्चनीय लोकतान्त्रिक उपज वाले इस पंचायतीराज ने आज भारत में अपनी गहरी जड़े जमा ली हैं।

यह निर्विवाद है कि नेहरू जी की इच्छानुसार पंचायतीराज की स्थापना से कृषिगत उत्पादन को कुछ सीमा तक बढ़ावा मिल है व देश के कुछ भागों में पूँजीगत साधनों के निर्माण में ग्राम की श्रमशक्ति का अधिक प्रयोग किया गया है। सत्ता व शक्ति जनता के चुने हुए व्यक्तियों के हाथों में पहुँचने से ग्रामीण जनता विकास के कार्यों में अधिक रुचि लेती हैं। इससे विकास अधिक सुनिश्चित हुआ है। दूसरी ओर सरकार ने भी भूमि सुधारों को कार्यान्वित करके एवं साख का सुदृढ़ ढांचा तैयार कर विकास के लिये अनुकूल वातावरण सृजित कर व्यापक पैमाने पर पंचायती राज जैसे प्रयोग की सफलता की संभावनाएँ बढ़ाई हैं। कुछ कमियों के बावजूद भी पंचायतीराज संस्थाओं ने ग्रामीण विकास में एक नया आयाम जोड़ा है तथा जिला प्रशासन ने एक और संरचनात्मक परिवर्तन को जन्म दिया है।

(4) विस्तार सेवा

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के साथ ही अक्टूबर 1952 में की गई राष्ट्रीय विस्तार की स्थापना भी नेहरू जी ने की थी। उनके अनुसार ग्रामीण विकास सम्यक विचारों का प्रतिबिम्ब है।[15] इसकी स्थापना एक ऐसी द्वि–पक्षीय संचार प्रणाली के रूप में की गई थी जिसके द्वारा प्रयोगशालाओं व प्रक्षेत्रों की खोजों को उपभोक्ता किसानों व अन्य उद्यमियों तक पहुँचाते हैं और दूसरी ओर इनकी समस्याओं को शोध केन्द्रों तक लाया जाता है। इस कार्यक्रम में विकास अधिकारी के निकट सहयोगी विस्तार अधिकारी अपने–अपने क्षेत्रों में विशेषता प्राप्त रखे गये थे। इसी कारण कृषि, पशुपालन, लघु सिंचाई, पंचायत आदि के लिये अलग–अलग विस्तार अधिकारियों का प्रावधान रखा गया। इसके अतिरिक्त औसतन 100 गाँव वाले एक विकासखण्ड में 10 ग्राम सेवक भी कार्य करते हैं।

(5) सहकारी आंदोलन

ग्रामीण विकास के संदर्भ में ''सहकारी आंदोलन'' को बढ़ावा देने के कारण नेहरू जी को कभी भुलाया नहीं जा सकता। वे सहकारिता को जीवन का एक तरीका मानते थे और इसी के माध्यम से भूमि अपखण्डन की समस्या को हल करना चाहते थे। भारत में सहकारी आंदोलन 1904 से चल रहा था जिसका प्रमुख उपयोग कृषकों को साख प्रदान करने के लिये किया गया। (यह आंदोलन जमीन के प्रयोग से विशेषतया प्रभावित हुआ।) नेहरू जी इस आंदोलन के मूल दर्शन से अत्यधिक प्रभावित हुए और उन्होंने इसे भारतीय जनजीवन की काया पलटने वाला मूल मंत्र मान लिया।[16]

(6) कुटीर एवं लघु उद्योग

यद्यपि नेहरू जी तीव्र विकास हेतु बड़े उद्योगों को महत्व देते थे, तथापि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मूलभूत संरचना में रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु उन्होंने तीव्र औद्योगीकरण की प्रक्रिया में गाँवों में कुटीर एवं लघु उद्योगों की स्थापना पर सुनिश्चित बल दिया। उनका विश्वास था कि ग्रामीण अर्थतंत्र में आय बढ़ाने की

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

दृष्टि से कृषि के सहायक उद्योग धंधों का समुचित विकास करना आवश्यक है। आज उन्हीं के इस विचार का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि निर्धनता निवारण की दृष्टि से इन उद्योगों का महत्व बढ़ गया है। नेहरू जी के अथक प्रयासों से 1948 में भारत में कुटीर उद्योग बोर्ड स्थापित कर दिया गया तथा समय पर्यन्त कुछ अन्य दस्तकारी बोर्डों और लघु उद्योग निगम की स्थापना हुई।[17]

चौधरी चरण सिंह की ग्रामीण विकास की विचारधारा :

अंग्रेजों ने अपनी उपनिवेशवादी नीति से लम्बे समय तक भारत पर राज्य किया और भारतीय शोषितों का सा जीवन व्यतीत करते रहे। देश के आर्थिक साधनों का बाह्य प्रवाह हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारत में स्वतंत्र चिंतन के अभाव में इस ओर कोई ध्यान नहीं गया। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आरम्भ हुए आर्थिक चिंतन में ब्रिटिश शासन के विरोध की स्पष्ट झलक दिखाई दी, जिसका बाद की आर्थिक विचारधारा पर दूरगामी प्रभाव पड़ा।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भारतीय कृषक समाज में एक अमंदधुति तारा उदित हुआ, यद्यपि कृत्रिम परिमार्जितता तथा राजनयिक तीक्षणता नहीं थी पर इससे विकीर्ण हुई किरणें राजनीति की बुलंदियों को चूमती हुईं आर्थिक दर्शन के नीलाकाश में जो आने वाले समय में थमीं व सुधी आयोजकों तथा विकास नीति निर्माताओं को अपनी अदम्य प्रेरणाओं की शीतल छाया प्रदान करता रहेगा। यह अमंदधुति तारा था – ''चौधरी चरण सिंह'', जिन्हें राष्ट्रवादी अर्थशास्त्री कहना सर्वथा उचित होगा। चरण सिंह के दिल में इस बात की गहरी टीस थी कि स्वतंत्र भारत को गरीबी, बेरोजगारी एवं अन्य रोजगार, आय की असमाताएँ तथा कठिन परिश्रम की कमी जैसी समस्याएँ विरासत में मिलीं और इस सबसे बढ़कर बात यह थी कि इन समस्याओं का उदय जीवन के प्रति गलत दर्शन रहा है। शायद इसीलिये स्वतंत्रता प्राप्ति से भी इन समस्याओं का भलीभांति से निवारण करने में कोई सहायता नहीं मिल पाई बल्कि यदाकदा इन समस्याओं का स्वरूप विकराल होता गया। इन समस्याओं के समाधान के लिये उन्होंने गाँधीवादी आर्थिक नीति के विस्तृत प्रारूप में सराहनीय उपाय सुझाये। इन विचारों को मोटे तौर पर निम्न प्रकार रखा जा सकता है।

(1) कृषि

चरण सिंह[18] कृषि को भारतीय संस्कृति का आधार मानते थे। उनका कहना था कि स्वतंत्रता के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व की पर्याप्त अनुभूति की असफलता ही अपने आप में एक बड़ी कमजोरी है और इस कमजोरी की वजह से भारत में एक लम्बी अवधि तक खाद्यान्ननों की कमी का कष्ट उठाया है। उनका कहना था कि कुल मिलाकर सम्पत्ति अंततोगत्वा भूमि पर ही पैदा की जाती है इसलिये कृषि स्पष्टतया प्राथमिक और मूलभूत उद्योग हैं, अतः हमें अपने खाद्यान्नों के उत्पादन में सभी प्रयत्नों को बढ़ाना चाहिये ताकि हमें विदेशी शक्तियों के मनमाने विचारों पर आश्रित न रहना पड़े। उन्होंने पोषाहार की समस्या से निपटने के लिये अलग–अलग किस्म के अनाजों तथा खाद्यान्नों की कैलोरी और पोषक तत्वों के अलग–अलग होने के कारण संतुलित पोषक तत्वों से भरी खुराक के संबंध में नौ सेना और सेना के राशन की मात्रा का मापदण्ड देते हुए लोगों को इस स्तर का भोजन देने का आग्रह किया।

(2) उपभोक्ता उद्योग

भारत की सघन कृषि व्यवस्था में उपभोक्ता उद्योग की चर्चा करते हुए, कृषि क्षेत्र से उत्तरोत्तर बढ़ते हुए कच्चे माल को बढ़ाने की आवश्यकता पर बल देने के उद्देश्य से, उन्होंने वनारोपण और पशुपालन को भी समान महत्व दिया। वे इस बात से हमको भलीभांति विज्ञ करना चाहते थे कि कृषि फसलों से उत्पन्न कच्चा माल कतिपय उद्योगों के लिये आवश्यक है। इन औद्योगिक क्रियाओं में कपड़ा, तेल निकालना, चावल कूटना, आटा, जूट, चीनी, वनस्पति, तम्बाकू आदि उल्लेखनीय है। इसी तरह लकड़ी, गोंद, लीसा, चमड़ा और खालें हड्डियाँ आदि भी विभिन्न उद्योगों का आधार बनते दिखाई देते हैं।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

(3) कृषि का वाणिज्यीकरण

भारत के लिये आत्मनिर्भरता का मार्ग रेखांकित करते हुए चरण सिंह ने कृषि के वाणिज्यीकरण की वकालत की।[19] ग्रामीण औद्योगीकरण के अंतर्गत आने वाले कुटीर उद्योगों के भविष्य को भी किसानों की आय वृद्धि के सहसंबंध स्थापित करते हुए उन्होंने उदाहरण दिया कि कोई भी किसान एक जोड़ा जूता उस समय तक नहीं खरीद सकता जब तक कि वह अपने उत्पादन में से कुछ हिस्सा बाजार से नहीं बेच देता। इसलिये उद्योगपति, परिवहन कार्यकर्ता, शिक्षाविद्, व्यापारी या डॉक्टर, इंजीनियर और इसी प्रकार के लोग स्वतः ही कृषि उत्पादन बढ़ने के साथ ही साथ अधिक हो जाते हैं और उनके माल व सेवाओं की मांग बढ़ जाती है। इसके विपरीत यदि हमारे किसान कारखानों और कृषित्तर कामगारों के लिये अधिक अन्न न उपजा सकें तो वर्तमान बाजार या तो छोटे हो जायेंगे या बिल्कुल ही समाप्त हो जायेंगे।

(4) कृषि से कामगारों की मुक्ति

भारत के आर्थिक विकास कृषित्तर व्यवसायों में लगे कामगारों की संख्या पर निर्भर मानते हुए चरण सिंह ने कहा कि ऐसे इच्छित आर्थिक विकास के परिप्रेक्ष्य में भूमि की कमी को अधिकाधिक पूँजी निवेश से पूरा करना होगा तथा कृषि संबंधी तकनीकी को भी निरंतर सुधारना होगा। कृषि उत्पादन में होने वाली निरंतर वृद्धि समस्त अर्थव्यवस्था की प्रगति की मुख्य शर्त है क्योंकि इसके बिना खाद्यान्न आधिक्य व कच्चा माल उपलब्ध नहीं हो सकता।

चौधरी चरण सिंह ने गाँधीवादी विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए ग्रामीण विकास के लिये एक ऐसी आर्थिक नीति को प्रस्तुत किया जिसमें कृषि को प्राथमिकता तथा हस्तशिल्प और कुटीर उद्योगों को प्रमुखता एवं विकेन्द्रीकरण और स्वावलम्बन पर बल दिया गया। इन सबके ऊपर समकालीन परिस्थिति में राजकीय एजेंसियों की अर्थव्यवस्था के काम में यथासम्भव भूमिका अदा करने को कहा गया, उन्होंने पूरे विश्व के साथ महात्मा गाँधी की भारत के लिये आर्थिक नीति का सरलतम संस्करण इस देश को दिया। भूमि पुत्र होने के कारण चौधरी चरण सिंह ने ग्रामीण विकास की ठोस एवं सर्वाधिक व्यवहारिक नीति का निर्माण किया, एक ऐसी नीति जिसकी व्यापकता तथा गहराई आने वाले समय में ग्रामीण जीवन की तस्वीर को बदल देगी।[20]

सन्दर्भ

[1] गौड़ रामदास ; ''हमारे गाँव की कहानी'', सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, पृष्ठ–2.
[2] Moseley, Malcolm J. (2003); Rural Development : Principles and Practice, Unpublished Thesis, London (UA) Page-5.
[3] According to World Bank (1975); Rural Development is defined as the strategy aiming at the improvement of economic and social living condition, focussing on a specific group of poor people in a rural area. It assists the poorest group among the people in a rural area to benefit from development.
[4] Chambers Robert (1983); Rural Development Putting the last first Essex. England, Longman Scientific and Technical Publishers, New York, John Willey.
[5] Sears David (2000); Rural Development in US, Whatss happening today and What's on the horizon ? LEADER Magazine.
[6] Rogers E.M. (1960); Social Change in Rural Society : A text book in rural Sociology, New York.
[7] Kumarappa J.C. (1952); The Gandhian Way of Life, All India Village Industries Association, Maganvadi, Wardha.

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.838192

[8] उपाध्याय डॉ. अनिल कुमार (1991–92); आर्थिक नीति एवं समता गाँधी, चिंतन : विनय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी.
[9] यादव सुबह सिंह (1991); ''ग्रामीण विकास एवं अर्थव्यवस्था'', रावत पब्लिकेशंस, जयपुर, नई दिल्ली पृष्ठ 152–157.
[10] उपाध्याय डॉ. अनिल कुमार (1991–92); आर्थिक नीति एवं समता गाँधी, चिंतन : विनय प्रकाशन मंदिर, वाराणसी.
[11] www.mapsofindia/personalities/nehru/econoicpolicies.html.
[12] दीक्षित डॉ. आर.के. (2002); आर्थिक चुनौतियाँ एवं चिंतन, रितु पब्लिकेशन्स, जयपुर.
[13] en.wikipedia.org/wiki/balwant.ai.meeting committee
[14] Singh Prof. Ranbir (2013); "The unfinished agenda of new Panchayati Raj System", Panchayat Raj Update, Institute of Social Science, Vol. XX, No. 12, Dec. 2012, P.1.
[15] Goel S.L. and Shalini Rajneesh (2009); Panchayati Raj in India : Theory and Practice, Deep and Deep Publications Pvt. Ltd., New Delhi.
[16] Dwivedi R.C. (2005); Hundred Years of Cooperative Movement in India, Vol. I, Centre for Promotion Cooperatives.
[17] यादव सुबह सिंह (1991); ''ग्रामीण विकास एवं अर्थव्यवस्था'', रावत पब्लिकेशंस, जयपुर, नई दिल्ली पृष्ठ 158–162.
[18] Paul R. Brass (2012); An Indian Political Life : Charan Singh and Congress Politics, 1957 to 1967, Sage Publications.
[19] Paul R. Brass (2012); An Indian Political Life : Charan Singh and Congress Politics, 1957 to 1967, Sage Publications.
[20] यादव सुबह सिंह (1991); ''ग्रामीण विकास एवं अर्थव्यवस्था'', रावत पब्लिकेशंस, जयपुर, नई दिल्ली पृष्ठ 165–169.

*Corresponding author.
E-mail address: tiwarivikash117@ gmail.com